New Man International Journal of Multidisciplinary Studies
(UGC Approved Journal No. 45886)
ISSN: 2348-1390
Impact Factor: 4.321 (IIJIF)

36.

नयी कविता की भावभूमि पर कवि सर्वेश्वर दयाल सक्सेना की भावाभिव्यंजना

डॉ. लक्ष्मी गुप्ता
यमुनानगर, हरियाणा

समसामयिक परिस्थितियों का प्रभाव नवीन साहित्यिक विधाओं को जन्म देता है। उनके परिवर्द्धन, परिमार्जन और परिष्करण इनकी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। रचनाकार को युगीन सन्दर्भों से होकर गुजरना पड़ता है। जिस कारण वह अपनी रचना में युग सत्यों को अनुभूति के स्तर पर आत्मसात् करते हुए ऐसे वाणी देता हुआ चलता है। समसामयिक परिस्थितियाँ जहाँ साहित्य पर अपनी प्रतिक्रिया छोड़ती हैं, वहीं परंपरागत काव्य प्रवृत्तियाँ भी नूतन साहित्य के सन्दर्भ में अपना विशिष्ट मूल्य रखतीं है। हिन्दी की 'नयी कविता' भी युगीन परिस्थितियों एवं साहित्यिक प्रेरणाओं की निष्पत्ति है। जिस पर समसामयिक परिस्थितियों, भारतीय एवं पाश्चात्य दर्शन, संस्कृति व अनेकानेक साहित्यिक काव्य धाराओं का प्रभाव परिलक्षित होता है।

यदि यह कहा जाए कि नयी कविता स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद विकसित होने वाली एक ऊर्जावान काव्यधारा है, जिसने स्वात्रन्त्र्योत्तर भारतीय जीवन और व्यक्ति की संश्लिष्ट जीवन परिस्थितियों का रचनात्मक साक्षात्कार किया है, तो अतिश्योक्ति नहीं होगी। संभवतः नई कविता से पहले कभी मानवीय सम्बन्धों को उतना गौरव नहीं मिला और न ही उनमें निहित करूणा, तनाव, अकेलापन, आतंक सीधे ढंग से काव्य में अवतरित हुए थे, जितने कि नयी कविता में हुए हैं। वस्तुतः नयी कविता का समस्त दृष्टिकोण आधुनिक है, जिसमें नव मूल्यों के प्रति विकलता व संवेदना निहित है। इसी दृष्टिकोण के कारण नया कवि आज के तनावों, सार्वभौम संकट, मनुष्य की पीड़ा एवं उसकी नगण्यता व गरिमा से जुड़ता है और इस सम्पृक्ति के दवाब में अभिव्यक्ति एवं संप्रेषण के माध्यमों को पुनराविष्कृत करता चलता है। यह दृष्टिकोण अज्ञेय, मुक्तिबोध, शमशेर, श्रीकांत वर्मा, धूमिल, कुंवर नारायण, राजकमल चौधरी, सर्वेश्वर दयाल, विजयदेव नारायण साही व लीलाधर जगूड़ी जैसे नए कवियों के पास था। जिन्होंने आधुनिक संवेदनाओं के साथ मानवीय परिवेश को संपूर्ण वैविध्य के साथ अपनी काव्य सर्जन का विषय बनाया।

अस्तु, नयी कविता मानवतावादी दृष्टिकोण पर आधारित है किन्तु यह मानवतावाद मिथ्या आदर्शों की परिकल्पनाओं पर आधारित न होकर यथार्थ की तीखी चेतना, परिवेश से जुड़ाव व चिंतन एवं संवेदना के उलझे हुए अनेक स्तरों पर आधारित है। जिसमें मात्र नयी कविता ही नहीं वरन संपूर्ण रचनायुग की प्रवृत्तियाँ आलोडित-विलोडित होती रहती हैं। जिसका दर्शन नवीन चिंतन-नवीन गति-नवीन अनुभूतियों से अनुस्यूत होकर नीति, धर्म, दर्शन व नाना प्रकार के मूल्यों को चुनौती देते हुए विकसित हुआ है।

हिन्दी काव्य साहित्य में सर्वेश्वर दयाल सक्सेना का काव्य आदर्श एवं यथार्थ दोनों भावों की पृष्ठभूमि पर आधारित है। सन् १९५० से लेकर काल-कवलित होने तक उन्होंने 'नयी कविता' को नव दशा-नव दिशा प्रदान की। समग्र साहित्येतिहास में यही वह वर्ष है जब 'नयी कविता' अपने वास्तविक विश्वसनीय रूप में दृष्टिगत हुई। इस प्रकार सर्वेश्वर का काव्य सृजन और नई कविता की यात्रा साथ-साथ प्रारंभ हुई। निःसंदेह सर्वेश्वर नयी कविता के जन्म-विकास-उत्कर्ष तीनों से जुड़े रहे। जिस

कारण नयी कविता के सशक्त हस्ताक्षरों में सर्वेश्वर दयाल सक्सेना का स्थान मुख्य बिन्दु पर अवस्थित है। जो न केवल नयी कविता के प्रमुख कवि थे अपितु प्रयोगवादी परंपरा के भी अपरिहार्य हस्ताक्षर थे। कारण, "उन्होंने नयी कविता को सही दिशा दी और उसकी संवेदना व शैल्पिक सज्जा में संतुलन कायम किया। कविता को जिन्दगी से सीधे मिलाते हुए नयी जीवन दृष्टि को शब्दबद्व किया और पहले से चली आ रही रोमांटिकता को आकाश से उतारकर धरती पर खड़ा करते हुए जिन्दगी के शापित-अभिशापित और संतप्त हिस्से को कविता को विषय बनाया।"१

निस्सन्देह सर्वेश्वर जी प्रयोगवादी काव्यधारा और नयी कविता के मध्य से होते हुए वहाँ पहुँचने का प्रयास कर रहे थे जहाँ वास्तविक लोक जन-जीवन टिका है और निरन्तर बेहतर बनने के लिए संघर्ष कर रहा है। यही कारण है कि प्रारंभ में सर्वेश्वर जी जिन मध्यवर्गीय भावनाओं के दवाब से काव्य यात्रा कर रहे थे, जीवन के यथार्थ से रूबरू होकर वह चिंताए व्यापक लोक जीवन व मानतावाद के उच्चादर्श हेतु आशावाद की नव किरण के रूप में काव्य में अभिव्यक्ति हुई।

"एक तरह से सर्वेश्वर ने नयी कविता को जिन्दगी की दैनंदिनी, परिवेश का दर्पण और आधुनिक बोध का प्रतीकत्व प्रदान किया है। जिन्दगी के विरोधाभास, असंगतियाँ, विकृतियाँ और इनसे जुड़े अनेक प्रश्न, अनेक सन्दर्भ जो नयी कविता की विषय परिधि में आते हैं, सर्वेश्वर के काव्य सृजन के अहम और ईमानदार पक्ष हैं। यही कारण है कि उनकी कविताएँ नयी कविता में न केवल उल्लेख्य हैं अपितु स्थायित्व का गुण भी लिए हुए हैं- ऐसा गुण जो निरंतर रेखांकित-परिष्कृत होकर कविता में आता रहता है।"२

वस्तुतः सर्वेश्वर प्रयोगवादी होने के साथ-साथ नये कवि हैं। उनकी भावानुभूति पर प्रयोगवाद का प्रभाव दिखाई पड़ता है। यह प्रभाव अपने आप में पूर्णतया 'रिफाइण्ड' है, जिस कारण उनकी कविताओं में प्रयोगवाद से भिन्न, एक अलग नवीनता व अलग मौलिकता दृष्टिगत होती है। उन्होंने अनायास भावुकता त्यागकर बौद्विक परिवेश को नहीं अपनाया अपितु स्वयं उस जीवन को भोगा और स्व अनुभव के धरातल पर भावुकता और बौद्विकता दोनों में समन्वय करते हुए, जीवन स्थिति व अनुभवगम्य रचनाएँ की। जिसमें अतीत के प्रति आसक्ति व वर्तमान के प्रति मोह की स्थिति बराबर बनी रहती है। जिस कारण उनकी रचनाओं में निरन्तर एक तनाव स्पष्ट नजर आता है, जो सर्वेश्वर जी को प्रयोगवादी रखते हुए भी समसामायिक या नयी कविता का प्रमुख कवि घोषित करता है। यथा- "यहीं कहीं एक कच्ची सड़क थी" कविता में सर्वेश्वर जी की भावाभिव्यंजना पर प्रयोगवाद का प्रभाव दृष्टिगत है-

"सुनो! सुनो!
किसने कहा-/किसने कहा/वह अपने को बेच दे/
किसी म्युनिसिपैलिटी का नंबर लगाकर/शव-सी पड़ी रहे/नयी लीकें न पकडे/गगगग/नक्कालों से सावधान चिल्लाये/लेकिन अपने भीतर गन्दी नालियों का नरक छिपाये/ऊपर से साफ चिकनी बनी रहे/किसने कहा।।"३

अस्तु, इस संपूर्ण कविता में प्रयोगवादी भावानुभूति के साथ-साथ नयी कविता की अपनी नवीनता है, जो प्रयोगवाद से संपृक्त रहते हुए भी उससे दूर है। यही अनुभव का वह बिन्दु है, जिसके कारण सर्वेश्वर नित नवीन बने रहे हैं। डॉ. रघुवंश जी के अनुसार "सर्वेश्वर समसामयिक होकर भी युग-जीवन की सम्पृक्ति को गहन अनुभव के स्तर पर ग्रहण कर सके हैं। उनके अनुभव में व्यक्ति और युग-जीवन इस प्रकार सम्पृक्त है कि चरम संवेदन में भी युग का यथार्थ व्यंजित हुआ है। (काठ की घंटियाँ, तांबे के फूल आदि) कवि अपनी

आत्मचेतना में व्यक्तित्व की समष्टि की व्यापक चेतना का माध्यम स्वीकार करता है।"[४]

मूलतः 'भाव' काव्य की मूल आत्मा है और किसी भी कविता का मूलाधार 'भाव' में ही निहित है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार- "नाना विषयों के बोध का विधान होने पर ही उनसे सम्बन्ध रखने वाली इच्छा को अनेकारूपता के अनुसार वे भिन्न-भिन्न योग संघटित होते हैं, जो 'भाव' या मनोविकार' कहलाते हैं।"[५] वस्तुतः भाव कविता की निधि है। अतिशय भावमयता ही किसी भी रचना को काव्य से जोड़ने का माध्यम बनती है। चिरन्तन और युगज दोनों प्रकार के भावों के अन्तर्गत प्रथम कोटि के भाव देश, काल और व्यक्ति की सीमा का उल्लंघन कर सार्वकालिक, सार्वभौमिक एवं सार्वजनीन बन जाते हैं। जिस कवि के भीतर इन भावों की जितनी गहरी पहचान होती है, वह उतना ही भावुक और महान समझ जाता है। सर्वेश्वर जी के काव्य सृजन में भावों की यह विशदता 'विवशता' कविता में स्वतः परिलक्षित होती है। यथा-

"कितना चौड़ा पाट नदी का, कितनी भारी शाम,
कितने खोये-खोये से हम, कितना तट निष्काम,
कितनी बहकी-बहकी-सी, दूरागत-वंशी-टेर,
कितनी टूटी-टूटी सी नभ पर, विहगों की फेर,
चार नयन मुस्काये, खोये, भीगे, फिर पथराये-
कितनी बड़ी विवशता जीवन की, कितनी कह पाये!"[६]

इसी प्रकार किसी देश-विशेष, जाति-विशेष, संस्कृति व काल विशेष संचित भावों की अभिव्यंजना में कवि यदि स्थूल दृष्टिकोण को अपनाए तो उसकी काव्य रचना प्रभावोत्पादकता के गुणों को तज कर हास्यास्पदता की ओर उन्मुख हो जाती है। ऐसे में वही कवि सफल होता है जिन्हें सच्चे भावों की वास्तविक पहचान होती है। इस दृष्टि से सर्वेश्वर जी की भावभिव्यंजना अपने उदात्व स्वरूप को प्राप्त करती है-

"कौन कह रहा, बंजारों-सा, यह जीवन बेकार है,
मैं सबका हूँ, सब मेरे हैं, सबसे मुझको प्यार है।
सब पर मेरी आशा है- सब पर मेरा एतबार है,
आगे बढ़ते जाना मेरे, जीवन का व्यापार है।
कहाँ समय है, बैठूँ सोचूँ, कौन जीत क्या हार है,
मेरी यात्रा का तो हर काँटा करता श्रृंगार है।"[७]

(बनजारे का गीत)

वास्तव में, इन कविताओं में संवेदनशील भावुक कवि की भावात्मकता ही जिन्दगी और जगत की सच्चाई के साथ वैज्ञानिक भूमि पर उतर आई है। शायद इसलिए भी, क्योंकि कवि सर्वेश्वर उक्त दोनों प्रकार के भावों की आधारशिला पर स्थापित होकर जीवन व जगत की भावनात्मकता के साथ ही वैज्ञानिकता का भी निरन्तर अन्वेषण करते चलते हैं। जिस कारण कभी उन पर हृदय की भावात्मकता उतनी ही हावी हो जाती है, जितनी कभी युग विशेष की वैज्ञानिकता। इसके साथ ही सर्वेश्वर की यह दोनों भावनाएँ आदर्श व यथार्थ के मध्य एक सुन्दर सामंजस्य स्थापित करती चलती हैं। जिससे उनके समूचे काव्य में एक अनूठापन सर्वत्र दृष्टिगोचर होता रहता है। यथा-"कवितायें-१" व "कवितायें-२" के साथ-साथ "क्या कहकर पुकारू?" काव्यकृतियों में यह अनूठापन अत्यंत गूढ़ अर्थों को अभिव्यंजित करता है।

"जितनी रंगीन चिडियाँ थीं मुझमें/सब उड़ गयीं
जाने कितने तरूओं गिरि शिखरों से, जुड़ गयीं
सूना नहीं हूँ, मैं फिर भी ओ चितेरे,
राग बनकर के/सब मुझमें ही निचुड़ गयीं।"[८]

वस्तुतः सर्वेश्वर तीव्र आवेगों और उत्तेजनाओं वाले व्यक्तित्व के स्वामी थे। जिसका पूरा प्रभाव उनके लेखन पर स्पष्ट है। बौद्धिकता की पृष्ठभूमि पर कभी उन्होंने साहित्य सृजन नहीं किया जिस कारण जिन भावों की अभिव्यंजनाओं को वे तीव्रता से महसूस करते थे, उसी पर विश्वास करते हुए वे उसी तीव्रता से उन्हें शब्द प्रदान करते थे। यह उनके लेखन

की अपनी निजी विशेषता थी। कविता में तर्क की अपेक्षा भावना को अधिक महत्व देने वाले सर्वेश्वर जी के लिए कविता से अभिप्राय था- आदमी और आदमी को बाँध सकने वाले मूल भावों और प्रतीतियों का उद्दीपन। यथा-

"तितली ने कहा फूल से/मैं तुम्हारे साथ/
कितनी भरीपूरी लगती हूँ/और उड़ गयी।"[६]

वास्तव में, सर्वेश्वर जी के ठोस अनुभव उनके हृदय की आँच से पिघलकर न केवल नवीन भाव-बोध, नयी अर्थवत्ता और वैज्ञानिकता को आधार देने में सक्षम हुए हैं अपितु उनकी संवेदना की धारा को और तेज व विस्तृत भी करते हैं। अवलोकन करने पर विदित होता है कि "सर्वेश्वर पहले ऐसे कवि हैं, जिन्होंने नयी कविता के संसार में रोमांस को मात्र भावना के स्तर तक लाकर ही नहीं छोड़ा है अपितु वे उसे वैचारिक सरणियों तक लेकर जाते हैं। यही वजह है कि 'काठ की घंटियाँ ' का रोमानी सन्दर्भ 'बाँस का पुल' में परिवर्तित रूप लिए हुए है और 'एक सूनी नाव' में वह वैचारिक होकर आगे के संग्रहों में अनेक यथार्थ प्रश्न छेड़ गया है।"[७] चूंकि सर्वेश्वर जी का संपूर्ण जीवन घोर संघर्षमय था। जिस कारण उनकी प्रत्येक रग-रग में दर्द समाया हुआ था। जिस मानव के दुख-दर्द को उन्होंने काव्य का वर्ण्य विषय बनाया, वह उनका अपना भोगा हुआ कटु यथार्थजन्य अनुभव था। यथा-

"दर्द के महासागर से कहो/सामने मेरे न चीखे।"[८]
इसी प्रकार -
"नहीं, नहीं प्रभु तुमसे/शक्ति नहीं माँगूंगा/
अर्जित करूँगा उसे मरकर बिखरकर/
आज नहीं कल सही आऊँगा उबरकर
कुचल भी गया तो लज्जा किस बात की
रोकूँगा पहाड गिरता/शरण नहीं माँगूंगा ।"[९]

अस्तु, सर्वेश्वर जी ने अपने जीवन दर्शन के द्वारा हिन्दी काव्य को अनूठा योगदान दिया, जहाँ सर्वेश्वर जी का संवदेनात्मक संसार इंसानियत के लिए निरन्तर संधर्ष करता रहा है। जिस कारण जब भी उन्हें कोई टूटा हुआ कंधा, थका हुआ पैर और भीख माँगता हाथ दिखाई देता है, तो वे उसे कविता में आत्मीयता से भावाभिव्यंजित करते हैं। सर्वेश्वर जी ने मुक्तिबोध और निराला के समान अपने समय की परिस्थितियों के दंश को झेला है, जिस कारण उनकी भावाभिव्यंजना की पृष्ठिभूमि अज्ञेय और गिरिजाकुमार माथुर की तरह न होकर मुक्तिबोध, भवानी प्रसाद मिश्र वा नेरेश महेता के सदृश है। एक कवि होने के नाते रचनाधर्मिता जिस ईमानदारी की मांग करती है, सर्वेश्वर उसी सूझ-बूझ के कवि है। जो झूठी मुस्कानों के स्थान पर सच्ची और वास्तविक चोटें बाँटते है। जिस कारण उनकी भावाभिव्यंजना में मौलिकता, वास्तविकता यथार्थवादिता, सरलता, सहजता और प्रभावोत्पादकता के गुणों का स्वतः समावेश होता चला जाता है। उनकी काव्यगत सजगता ही उनकी नवीनता की परिचायक है। कवि में न कोई अनुभूति वर्जित है और न कोई जीवन-दृष्टि बहिष्कृत। इसी कारण सर्वेश्वर नयी कविता के आत्म सजग कवि हैं और युग के विचारों और समस्याओं को वाणी देने वाली कविता ही सर्वेश्वर जी की नयी कविता है। डॉ. जगदीश गुप्त के अनुसार- "सर्वेश्वर उन कवियों में सर्वप्रमुख हैं, जिनकी कविताओं ने छठे दशक के प्रारंभ में ही मुझे 'नयी कविता' की शक्ति सामर्थ्य के प्रति गहरायी से आश्वस्त किया था।. ... सर्वेश्वर के कृतित्व का नयी हिन्दी कविता के सन्दर्भ में ऐतिहासिक महत्व भी माना जाएगा, इसमें संदेह नहीं।"

अंत में कवि सर्वेश्वर दयाल जी के ही अनुसार-

"मैं हर डर को तितलियों में बदल दूँ
मैं हर तकलीफ बन्दूकों में भर दूँ
कंटीले तार का बाडा बनूँ मैं
चबाये जाने से बिरवे बचाऊँ।

समंदर का अँगरखा अपने तन पर
और झरने की तुम्हारी ओढनी हो,
पहाड़ों को उठा परचम बढ़ूँ मैं
नयी धरती नया नक्शा बनाऊँ।।

मेरी सूरत हो सच्चाई की सूरत
मेरी हर साँस आजादी की मूरत,
हिमालय सा बढ़ाये बाँह निर्भय,
मैं हर सीने का हर पत्थर उठाऊँ।"

सन्दर्भ ग्रन्थ सूचीः–

१. डॉ. हरिचरण शर्मा, सर्वेश्वर का काव्यः संवेदना और संप्रेषण, पृष्ठ २२
२. डॉ. हरिचरण शर्मा, सर्वेश्वर का काव्यः संवेदना और संप्रेषण, पृष्ठ २२-२३
३. सर्वेश्वर, कवितायें-१, पृष्ठ २१६-२२०
४. डॉ. रघुवंश, समसामयिकता और आधुनिक हिन्दी साहित्य, पृ. २६२
५. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, चिन्तामणि, भाग-१, पृष्ठ -१
६. सर्वेश्वर, कवितायें-१, पृष्ठ-३०
७. सर्वेश्वर, कवितायें-१, पृष्ठ-६०-६१
८. सर्वेश्वर, खूंटियों पर टंगे लोग, पृष्ठ-८२
९. सर्वेश्वर, जंगल का दर्द, पृ. ११८
१०. डॉ. हरिचरण शर्मा, सर्वेश्वर का काव्यः संवेदना और संप्रेषण, पृष्ठ १०६
११. सर्वेश्वर, कवितायें-१, पृ. ४५
१२. सर्वेश्वर, कवितायें-२, पृ. १३०
१३. मुक्तिबोध, नए साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र
१४. डॉ. गोविंद त्रिगुणायत, शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धान्त, भाग-२
१५. डॉ. रामविलास शर्मा, संस्कृति और साहित्य

❑❑❑